International Journal of Physical Education, Sports and Health 2025; 12(1): 08-11

P-ISSN: 2394-1685
E-ISSN: 2394-1693
Impact Factor (RJIF): 5.38
IJPESH 2025; 12(1): 08-11
© 2025 IJPESH
https://www.kheljournal.com
Received: 19-11-2024
Accepted: 21-12-2024

कुलदीप कुमार
शोधार्थी, पी.एच.डी.,योग विषय, लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर, मध्यप्रदेश, भारत

डॉ. सी. पी. सिंह भाटी
सह-आचार्य, खेल मनोविज्ञान विभाग, लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर, मध्यप्रदेश, भारत

डॉ. माधवी चंद्रा
प्राध्यापिका, योग विभाग, सैम ग्लोबल विश्वविद्यालय, रायसेन, मध्यप्रदेश, भारत

भानुप्रताप सिंह बुन्देला
शोधार्थी, पी.एच.डी., योग विषय, योग विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्यप्रदेश, भारत

Corresponding Author:
कुलदीप कुमार
शोधार्थी, पी.एच.डी.,योग विषय, लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर, मध्यप्रदेश, भारत

भारत का प्राचीन मनोविज्ञान: योगदर्शन के परिपेक्ष्य में

कुलदीप कुमार, सी. पी. सिंह भाटी, माधवी चंद्रा, भानुप्रताप सिंह बुन्देला

DOI: https://doi.org/10.22271/kheljournal.2025.v12.i1a.3619

सारांश
भारत की ज्ञान परम्परा विश्व की प्राचीनतम और समृद्धतम परम्परा है, जिसमें योग का विशेष महत्व है। भारतीय दर्शन में योग को आस्तिक और नास्तिक दोनों ही दर्शनों द्वारा स्वीकारा गया है और मोक्ष प्राप्ति हेतु योगिक साधना पर जोर दिया गया है। महर्षि पतंजलीकृत योग दर्शन का इसमें खास स्थान है, जो मन, बुद्धि, और अहंकार जैसे मनोवैज्ञानिक शब्दों की गहन विवेचना करता है। इस योगसूत्र पर वेद व्यासकृत व्यास भाष्य में चित्त की भूमियों का भी विस्तृत वर्णन किया गया है, जिससे इसे भारतीय परम्परा का मनोविज्ञान कहना उचित है।

कूटशब्द: योग, मन, चित्त, मनोविज्ञान, चित्तशुद्धि

प्रस्तावना
भारत की ज्ञान परम्परा विश्व की सर्वाधिक प्राचीन ज्ञान परम्परा है इस समृद्ध ज्ञान परम्परा में योग का अपना विशेष महत्व है भारतीय दर्शन में योग को निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है आस्तिक तथा नास्तिक दोनों दर्शन में मोक्ष प्राप्ति हेतु योगिक साधना पर विशेष बल दिया गया है जिसमें महर्षि पतंजलीकृत योग दर्शन का विशेष महत्व है इसमें मन, बुद्धि व् अहंकार आदि मनोविज्ञानिक तकनीकी शब्दों की सम्यक विवेचना की गई है इसमें न केवल चित्त की वृत्तियों (विचारों) का विवेचन किया गया है बल्कि योगसूत्र पर किया गया वेद व्यासकृत व्यास भाष्य में चित्त की भूमियों का भी विशद वर्णन किया गया है इस दृष्टि से इसे भारतीय परम्परा का मनोविज्ञान भी कहा जाये तो उचित ही होगा.
योग शब्द संस्कृत की युज् धातु से बना है। संस्कृत व्याकरण में 'युज्यते अनेन' इस व्युत्पत्ति के साथ युज् धातु से करण अर्थ में घञ् प्रत्यय के संयोग होने से योग शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ होता है, जोड़ना अर्थात् किसी भी वस्तु से स्वयं को जोड़ना या किसी कार्य में स्वयं को लगाना। पाणिनी अष्टाध्यायी के गणपाठ के अनुसार तीन प्रकार से 'युज्' धातु का पाठ मिलता है -

यूजिर् योगे – रुधादिगणीय, युज् संयमने – चुरादिगणीय व युज् समाधौ – दिवादिगणीय
योगसूत्र पर भाष्य लिखते समय महर्षि वेद व्यास जी ने योग शब्द का अर्थ समाधि (युज् समाधौ) बताया है। अतः यह सिद्ध है कि दर्शन के क्षेत्र में इसका अर्थ समाधि से है। फिर भी योग शब्द को व्यापक अर्थों में प्रयोग किया जाता है। पतंजलि योगसूत्र के अनुसार योग का अर्थ चित्त की वृत्तियों का निरोध है[1], साँख्य दर्शन के अनुसार – "पुरुष तथा प्रकृति के वियोग का नाम ही योग है।"[2] श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार योग समत्व का भाव है[3] यह योग कर्मों की कुशलता से प्राप्त होता है।[4]

[1] योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/2)
[2] पुरुषप्रकृत्योर्वियोगेऽपि योग इत्यभिधीयते। (सांख्यदर्शन)
[3] समत्वं योग उच्यते। (श्रीमद्भगवदगीता 2/48)
[4] योगः कर्मसु कौशलम्। (श्रीमद्भगवदगीता 2/50)

पातञ्जल्य योगसूत्र में वर्णित मनोविज्ञान

महर्षि पतंजलीकृत योगसूत्र भारत की प्राचीन योग परम्परा का ही अनुशासन है. यह योगसूत्र के प्रथम सूत्र से ही स्पष्ट है जिसमें चित्त की वृत्तियों (विचारों) के निरोध को ही योग कहा गया है इस योग का परिणाम यह है कि द्रष्टा (साक्षी चेतन आत्मा) अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है और अपने स्वरूप का अनुभव करता है अन्यथा अन्य स्थिति में तो चित्त की वृत्तियों के अनुरूप हो जाता है.

योगसूत्र में वर्णित चित्त की वृत्तियाँ (विचार)

योगसूत्र में चित्त की पांच वृत्तियों का वर्णन किया गया है जो क्लिष्ट (योग साधना में बाधक) तथा अक्लिष्ट (योग साधना में सहायक) सिद्ध होती हैं.[5]

यह वृत्तियाँ पांच प्रकार की होती हैं – प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति [6]

प्रमाण: यथार्थज्ञान को प्रमाण कहते हैं यह तीन प्रकार के होते हैं- प्रत्यक्ष, अनुमान व आगम[7]. इन्द्रिय प्रत्यक्ष को ही प्रत्यक्ष प्रमाण कहते हैं अर्थात् जो ज्ञानेन्द्रियों द्वारा जाना गया वह प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है. पूर्वप्रत्यक्ष तथा वर्तमान प्रत्यक्ष के संयोग से जो नवीन ज्ञान उत्पन्न होता है उसे अनुमान प्रमाण कहते हैं तथा आप्त पुरुषों के वचनों को और वेद वाक्यों को आगम प्रमाण कहते हैं.

विपर्यय: विपरीत ज्ञान को विपर्यय कहते है जो जैसा है उसे वैसा न देख विपरीत जान लिया जाता है कभी कभी यह भी होता है कि जो तथ्य या विचार व्यक्ति के मन में हो वही बाहर भी प्रतीत होने लगता है यह एक प्रकार का मिथ्याज्ञान है.[8]

विकल्प: कल्पित ज्ञान को विकल्प कहते हैं जो वस्तु वास्तव में नही होती उसकी सत्ता ही नही हो फिर भी किसी से उसके बारे में सुनकर ही हमारे चित्त में वृत्ति (विचार) बन जाता है यह एक कल्पना मात्र होती है.[9]

निद्रा: यह चित्त की वह वृत्ति है जिसमें चित्त में ज्ञानेद्रियों के द्वारा कोई वृत्ति नही बनती है यह गाढ़ी निद्रा की वृत्ति है इसमें केवल अस्मिता की वृत्ति बनी रहती है तथा अन्य वृत्तियों के आभाव का ही भान रहता है. अत: यह योग (चित्तवृत्ति निरोध) की स्थति भी नही है अत: इसे निद्रा वृत्ति कहा गया है यह अन्य वृत्तियों के आभाव की वृत्ति है [10]

स्मृति: जीवन के में पूर्व में अनुभव किये गये विषयों का चुप नही पाना उनका पुन: प्रकट हो जाता ही स्मृति वृत्ति कहलाती है [11]

योगसूत्र में वर्णित चित्त की भूमियाँ (अवस्था)

योगसूत्र में चित्त की दो मुख्य अवस्थाओं का वर्णन प्राप्त होता है- 1. व्युत्थान अवस्था तथा 2. निरुद्ध अवस्था.[12] व्युत्थान वह अवस्था है जिसमें चित्त में वृत्तियां (विचार) बने रहते हैं तथा निरुद्ध अवस्था में चित्त में वृत्तियों (विचारों) का निरोध हो जाता है. महर्षि पतंजली प्रणित योगसूत्र पर महर्षि व्यास जी द्वारा रचित भाष्य भी प्राप्त होता है जिसमें चित्त की पांच भूमियों (अवस्थाओं) का वर्णन किया गया है वह हैं – क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र तथा निरुद्ध. इनमें वर्णित प्रथम तीन अवस्था साधारण मनुष्यों के चित्त की अवस्था हैं तथा अंतिम दो योगियों के चित्त की अवस्था है. व्यास भाष्य में जो चित्त पांच अवस्थाओं का वर्णन है उनमें से प्रारम्भिक चार अवस्था महर्षि पतंजली द्वारा वर्णित व्युत्थान अवस्था के अंतर्गत आती हैं तथा पांचवी निरुद्ध अवस्था के अंतर्गत आती है.

मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की सम्पूर्ण समन्वित क्रिया उसकी मानसिक स्थिति और मानसिक स्वास्थ्य को प्रदर्शित है।' मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति के निम्न लक्षण हैं -

1. अपने आत्मसम्मान का ध्यान रखना।
2. निश्चय करने की क्षमता।
3. अनुभव से अधिगम अर्थात् सीखने की क्षमता का होना।
4. समय को ध्यान में रखते हुए व्यवहार करना अर्थात् समय का सदुपयोग करना।
5. विश्लेषणात्मक बुद्धि का होना।
6. उचित सुरक्षा अथवा सुरक्षा के सम्बन्ध में सजग रहना।
7. स्वयं में स्फूर्ति का होना अर्थात् उदासी न होना।
8. सही निर्णय करने की क्षमता का होना।
9. घमण्ड रहित बुद्धि अर्थात् बुद्धि का स्तर सामान्य होना।
10. स्वार्थी न होना।
11. समायोजन की क्षमता होना।
12. कर्मठता का होना।
13. सत्य बोलने का साहस का होना।
14. सत्य को स्वीकार व धारण करने की क्षमता अर्थात् सच्चाई से कभी इन्कार न करना।
15. विवेकवान होना यह सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है।

चित्त की असहज स्थिति या कार्य सफलता में होने वाले विक्षेप (विघ्न)

योगसूत्र में चित्त के नौ विक्षेप तथा पाँच विक्षेप सहभुव का वर्णन किया गया है यह विक्षेप चित्त की असहज स्थति प्रतीक हैं तथा यह चित्त अथवा मन की असंतुलित स्थिति को दर्शाता है यह योग साधना ही नही बल्कि अन्य रचनात्मक कार्यों को करने में भी बाधक सिद्ध होते हैं. यह नौ विक्षेप हैं व्याधि (शारीरिकरोग), स्त्यान (साधना या कर्म में प्रेरित न हो पाना), संशय (साधना या कर्म की सफलता में संदेह), प्रमाद (साधना या कर्म की अवहेलना), आलस्य (शारीरिक थकान आदि के कारण साधना या कर्म करने में संलग्न न हो पाना), अविरति (वैराग्य का आभाव), भ्रान्तिदर्शन (योग अथवा अपने लक्ष्य के प्रति भ्रान्ति होना),

---

[5] वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/5)

[6] प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/6)

[7] प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/7)

[8] विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/8)

[9] शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः ॥ पात) (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/9)

[10] अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/10)

[11] अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/11)

[12] व्युत्थाननिरोधसंस्कारयोरभिभवप्रादुर्भावौ निरोधक्षणचित्तान्वयो निरोधपरिणामः॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 3/9)

अलब्धभूमिकत्व (बहुत प्रयास के बाद भी सफलता का आभाव), अनावस्थितत्व (उच्यस्थिति या सफलता का स्थिर न रह पाना).[13] उक्त सभी चित्त के विक्षेप कहे गये हैं. इनके आलावा विक्षेपसहभुव भी होते हैं जो साधना या कर्म में विघ्न रूप से प्रकट होते हैं वह हैं- दुःख (अधिभौतिक, अधिदैविक व अध्यात्मिक दुःख), दौर्मनस्य (इच्छापूर्ति न होने पर मन का क्षोभ), अङ्गमेजयत्व (शरीर में कम्पन), श्वास (बाह्य कुम्भक में विघ्न होना), व प्रश्वास (भीतरी कुम्भक में विघ्न होना).[14] उक्त सभी साधक या कर्मठ व्यक्ति को कर्म करने में या उसकी सफलता में बाधक सिद्ध होते हैं. अत: यह सभी मन या चित्त की असहज स्थिति या विक्षेप हैं. साधक तथा कर्मठ व्यक्ति को चाहिए कि वह चित्त के इन विक्षेपों को समझे तथा इनसे दूर होने का प्रयास करे तभी उसे अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफलता मिल सकती है.

चित्त के विघ्नों को दूर कर चित्त शुद्धि के उपाय

महर्षि पतंजली के अनुसार एक तत्व का अभ्यास (अपने कर्म में फोकस) करने से चित्त में एकाग्रता आती है जिससे चित्त के विघ्नों को दूर होने लगते हैं .[15] इसके आलावा चित्त की निर्मलता तथा प्रसन्नता के लिए उपाय भी बतलाये गये हैं- उपाय-1 सुखी व्यक्ति के प्रति मैत्री, दुःखी व्यक्ति के प्रति करुणा, पुण्यात्मा (महान) व्यक्तियों के प्रति मुदिता (प्रसन्नता) तथा दुष्ट व्यक्तियों के प्रति उपेक्षा का भाव रखने से चित्त निर्मल व् प्रसन्न हो जाता है..[16] उपाय-2 बाह्य कुम्भक के अभ्यास से भी चित्त शुद्ध हो जाता है.[17] उपाय-3 अभ्यास करते रहने से साधक को दिव्य विषयों का साक्षात्कार आठवा दैवीय कृपा के अनुभव से भी चित्त शुद्ध व् निर्मल हो जाता है जो योग आदि साधना में सहायक सिद्ध होती है.[18] उपाय-4 शोकरहित प्रकाशमय प्रवृत्ति का अनुभव भी चित्त को स्थिर व् शुद्ध करने में सहायक सिद्ध होता है.[19] उपाय-5 वैरागी पुरुष को ध्येय बनाकर तथा उसके वैरग्य आदि गुणों का चिन्तन करने से भी चित्त शुद्ध व् निर्मल हो जाता है.[20] उपाय-6 स्वप्न में कोई दिव्य प्रकाश या इष्ट देवी-देवता आदि का साक्षात्कार हुआ है तो उस वृत्ति का चिन्तन करने से अथवा निद्रा की अवस्था में विषयों के आभाव का ज्ञान ही रहता है इस अवस्था का चिन्तन करने से भी साधक का चित्त एकाग्र हो जाता है.[21] उपाय-7 अथवा अपनी रूचि के अनुसार प्रिय लगने वाले किन्तु सात्विक विषयों का चिन्तन करने से भी चित्त निर्मल हो जाता है.[22]

चित्त के निर्मल होने के लाभ

महर्षि पतंजली के द्वारा बताये गये चित्त के निर्मल करने के उपायों के अभ्यास द्वारा जब चित्त शुद्ध व् स्थिर हो जाता है तब साधक अपने चित्त को सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा महत् से महत् पदार्थों को जब चाहे जहाँ चाहे स्थिर कर सकता है. साथ ही उसका अपने चित्त पर पूरा अधिकार हो जाता है.[23] चित्त अत्यन्त निर्मल होने से साधक में समाधि की योग्यता हो जाती है क्योकि इस समय चित्त की समस्त वृत्तियाँ क्षीण होने से चित्त स्फटिकमणि की तरह निर्मल हो जाता है तथा चित्त ग्रहीता (पुरुष चेतना), ग्रहण (अन्त:करण) तथा ग्राह्य (पंचभूत आदि विषय) में स्थित हो जाने तथा तदाकार हो जाने की स्थिति अर्थात् सम्प्रज्ञात समाधि की स्थिति प्राप्त हो जाती है.[24] सम्प्रज्ञात समाधि के बाद साधक क्रमश: उतरोत्तर असम्प्रज्ञात समाधि तक पहुंचता है. यह तो योगियों की चित्त की स्थिति है. अतिमानस की स्थिति है किन्तु साधारण मनुष्यों को चाहिए कि वह योग की प्रारम्भिक अवस्था का लाभ लेता हुआ अपना उतरोत्त विकास करता जाए निश्चित रूप से आत्मिक उन्नति ही वास्विक उन्नति है. महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने भी कहा है-

आत्मा वा अरे द्रष्टव्य: श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य:..[25]

उपसंहार

योगदर्शन प्राचीन भारत का मनोविज्ञान है जिसमें मन (चित्त) के विचार, प्रवृत्ति, अवस्थाओं तथा विघ्नों तथा विघ्नों को दूर कर उसको निर्मल करने के उपायों का सम्यक वर्णन किया गया है. योगदर्शन में चित्त की मानस तथा अतिमानस सभी प्रकार की अवस्थाओं का वर्णन प्राप्त होता है. इसका अध्ययन करने से प्राचीन भारत की मनोविज्ञान शास्त्र का अध्ययन हो जाता है चित्त तथा मन की समग्र स्थिति का अध्ययन हो जाता है साथ ही प्राचीन भारत मनोवैज्ञानिक अध्ययन में कितना विकसित तथा अग्रणी था यह भी स्पष्ट ज्ञात हो जाता है. इस ग्रन्थ में चित्त तथा मन का पर्याप्त अध्ययन हो जाता है अत: मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी यह शास्त्रों बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है साथ ही साथ जीवात्मा के दु:खों की आत्यंतिक निवृत्ति हेतु अर्थात् कैवल्य (मोक्ष) की स्थिति को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होने के कारण भी इस ग्रन्थ का महत्व अन्य सभी दर्शनों में निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है.

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

1. गोयन्दका, हरिकृष्णदास, योगदर्शन, प्रथम संस्करण, 37वां पुनर्मुद्रण (सं० 2066), गीताप्रेस, गोरखपुर-273005;
2. भगवद्पाद शंकराचार्य, प्रथम संस्करण, 15वां पुनर्मुद्रण (सं० 2068) , "बृहदारण्यकोपनिषद्" (आदि शंकराचार्य कृत भाष्य) , गीताप्रेस, गोरखपुर-273005;
3. निरंजनानन्द, परमहंस, योगदर्शन, श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाड़ा, देवघर (बिहार), प्रथम संस्करण (1994)
4. डॉ. राधाकृष्णन्, भगवद्गीता, हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली- 110003, प्रथम संस्करण (2004), पुनर्मुद्रण (2008)

---

13 व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/30)

14 दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/31)

15 तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/32)

16 मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/33)

17 प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/34)

18 विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/35)

19 विशोका वा ज्योतिष्मती ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/36)

20 वीतरागविषयं वा चित्तम् ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/37I)

21 स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/38)

22 यथाभिमतध्यानाद्वा ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/39)

23 परमाणुपरममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/40)

24 क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः ॥ (पातञ्जल्य योगसूत्र 1/41)

25 (बृहदारण्यकोपनिषद अध्याय2/ ब्राह्मण4/मन्त्र5)

5. उपाध्याय, बलदेव, भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली-110007, संस्करण (1979)
6. करम्बेलकर, पी. वी., पतंजलि योग सूत्र, कैवल्यधाम (प्रकाशन विभाग), लोनावला, संस्करण (2005)
7. शर्मा, श्रीराम, पातञ्जल्य योग का तत्व दर्शन, युग निर्माण योजना, मथुरा, संस्करण (1968)
8. सिंह, बद्रीनाथ, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, आशा प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण (1997)
9. सिंह, केदारनाथ एवं सिंह, भारतीय दर्शन, ज्ञानदा प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण (2002)
10. बलदेव, आचार्य, भारतीय दर्शन, शारदा मन्दिर, वाराणसी-221001, संस्करण (1997)
11. राम, पंडित तुलसी, सांख्य दर्शन, डायनेमिक पब्लिकेशंस (इण्डिया) लि.-11, मेरठ-250001 प्रथम संस्करण
12. दौनेरिया, डॉ० साधना, पातञ्जल्य योग सार, मधुलिका प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण (2011)